अध्याय - 4

"पं. नरेंद्र शर्मा के खंडकाव्य : पात्रपरिकल्पना"

अध्याय - 4

नरेंद्र शर्मा के खंडकाव्यः पात्रपरिकल्पना-

कथावस्तु की तरह पात्र तथा उनका चरित्र चित्रण खंडकाव्य का महत्वपूर्ण अंग हैं। पात्र कथावस्तु के संचालक होते हैं। पात्रों के चरित्र चित्रण से ही कवि अपने काव्य की कथा को युगानुरुप चित्रित करनेका प्रयास करता हैं। प्रत्येककवि अपने काव्य के लिए प्राचीन अथवा अर्वाचीन पौराणिक अथवा ऐतिहासिक कथा को ले सकता हैं और उसके अनुरुप वह पात्रों की चरित्र रेखाओं का निर्माण करता हैं लेकिन इन कथाओंमें कवि स्वतंत्र होने के कारण वह परंपरा के अनुरुप चित्रित करते हुए भी उनके चरित्र चित्रण में नवीन वेशभूषा एवं विचारोंको प्रस्तुत करता हैं। पात्र योजना, पात्रोंका चारित्रिक विकास कृति को आकर्षक बनाता हैं इतनाही नहीं तो कथा का उद्‌देश्य भी पात्रों के चरित्र में ही निहित रहता हैं।

इस अध्याय में हम श्री. नरेंद्र शर्मा के 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' इन कृतियों के पात्र तथा उनके चरित्र चित्रण की चर्चा करेंगे। इन दोंनों काव्यों की कथावस्तु महाभारत से संबंधित हैं। द्रौपदी' खंडकाव्य में कवि ने द्रौपदी स्वयंवर से महाभारत के उठारह दिवसीय युध्द की समाप्ति तक का वर्णन किया हैं, तो उत्तरजय में द्रौपदी की कथा से आगे का वर्णन किया हैं। अतः दोनों काव्यों के पात्रों पर समन्वित रुप से विचार करना ठिक होगा।

नरेंद्र शर्मा लिखित 'द्रौपदी' तथा 'उत्तरजय' में द्रौपदी की नायिका 'द्रौपदी' तथा 'उत्तरजय' के नायक युधिष्ठिर के अतिरिक्त धृतराष्ट्र, गांधारी, भीष्म, पितामह, दुर्योधन, शकुनि, कृष्ण, कुंती, अश्वत्थामा, आदि पात्र हैं इन सभी पात्रोंका परिचय निम्नलिखित रुप से दिया जा सकता हैं।

SARR. B... ...AR LIBRARY
SHIVA... KOLHAPUR

"द्रौपदी"

नरेंद्र शर्मा लिखित 'द्रौपदी' खंडकाव्य की नायिका केंद्रिय पात्र है। महाभारत के पौराणिक आख्यान के अनुसार द्रौपदी पांचाल नरेश द्रुपद की पुत्री थी। द्रोणाचार्य का बदला लेने के लिए जिस यज्ञका अनुष्ठान द्रुपद ने किया था, उस यज्ञ से द्रौपदी की उत्पत्ति

हुई थी। कविने अपने काव्य में उसे आधुनिक संदर्भों में चित्रित की है। द्रौपदी काव्यकृति में चित्रित द्रौपदी नर के लिए एक ऐसी अद्‌भुत शक्ति हैं जो पुरुष के कल्याण के लिए दुःख, पीडा, यातना, सहन करती हैं। कविने द्रौपदी को पाँच महातत्वो को सश्लिष्ट और तेजोमय कर देनेवाली जीवनीशक्ति के रुप में देखा हैं। कवि ने उसका महत्व स्वीकार करते हुए लिखा हैं--"द्रौपदी को नारी शक्ति का दृप्त-दीप्त प्रतीक मानकर मैंने उस दिव्य प्रतीक को नमन किया हैं , द्रौपदी का चरित्र दिव्य हैं पौराणिक पात्रो में वही अकेली हैं जो श्याम वर्ण है।"। इस दृष्टि से देखा जाय तो द्रोपदी तथा उत्तरजय में उनके व्यक्तित्व का व्यापक चित्रण हुआ हैं। उनके व्यक्तित्व को हम निम्नलिखित विशेषताओं से देख सकते हैं--

1) **जीवनीशक्ति की प्रतीक**- जीवनीशक्ति रुपी द्रौपदी नर की कुलवधु है। वह अपनी प्रचंड दीप्ति और अमोघ प्रेरणा के कारण वह कृत्या के रुप में चित्रित है। अपनी इसी विशेषताओंके कारण वह सत्ययुग की रेणुका और त्रेतायुग की सती सीता की गौरवशाली परंपरा में सम्मिलित हुयी हैं। द्रौपदी जीवनीशक्ति की शाश्वत प्रतीक है और युधिष्ठिर भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, क्रमशः आकाश, वायु, अग्नि, जल, और पार्थिव तत्व के प्रतीक हैं ये पाँच महातत्व हैं, जिसमें द्रौपदीरुपी जीवनीशक्ति चैतन्य की ज्वाला भरती हैं। द्रौपदी स्वयवर के फलस्वरुप जीवनीशक्ति द्रौपदी की प्राप्ति से पाँच पांडवों के रुप में पाँच महातत्व अपना संश्लिष्ट स्वरुप प्राप्त करते हैं, और प्राप्त करते हैं अपने लुप्त सत्वोंको।"2

जबतक पांडवोंने उनका वरण नहीं किया तबतक वे ब्राम्हण वेष में भिक्षाटन करके अपना दैन्य जीवन भोग रहें थे, लेकिन स्वयंवर के संयोग से पाँच महातत्व अर्थात पाँच पांडव और जीवनीशक्ति अर्थात द्रौपदी का संगम होने से वे चैतन्य की लपटोंसे प्रज्वलित हुए तथा अपने लुप्त सत्वोंको प्राप्त करते हैं--

"द्रौपदी जीवनीशक्ति, सौप दी गई पाँच तत्वोंको,
या कहा नियति ने पार्थ।
करो अब प्राप्त लुप्त सत्वोंको।"3

इस प्रकार द्रौपदी जीवनीशक्ति का प्रतीक हैं। यह जीवनीशक्ति पुरुष की कर्म प्रेरक शक्ति है, कर्म का कवच पहननेवाली है , जो पुरुषोंमें होनेवाली लुप्त शक्ति को अपने तेजोमय आभा से प्रज्वलित कर कर्म के ओर प्रेरित करती हैं।

2) **नर की शक्ति**- नारी ही मनुष्य की प्रेरक शक्ति हैं, नारी प्रकृतिरुपा है,

प्रकृति परमपुरुष की इच्छा का प्रतिफलन हैं। अपने एकाकी जीवन की नीरसता , उदासीनता और निस्सारता को समाप्त करके उसे अनुरंजनकारी और जीने योग्य बनाने के प्रयोजन से परमपुरुष ने स्वयं अपने भीतर से प्रकृति की सृष्टि की नारी पुरुषजन्य प्रकृति हैं।"4 द्रौपदी ने भी युधिष्ठिर को पुरुषार्थ और कर्म के लिए प्रेरित किया--

"फूला न समाया पुरुष
शक्ति चितवन ने कहा प्रकृति हूँ।
तुम धर्मराज भूपाल,
धारणाशक्ति ध्रुवा मैं धृति हूँ।"5

द्रौपदी जीवनीशक्ति आनंद, प्रेम, आल्हाद, में उन्माद रहनेवाली पंचतत्वों की कल्याणी हैं। वह श्रीकृष्ण की बहन तथा महामाया नारायणी शक्ति से संपन्न कर्म की प्यासी हैं। वह आकाश से अवतरण करनेवाली पंचाग्नि की साकार सजीव मूर्ति हैं। द्रौपदीरुपी तीव्र शक्ति को देखकर ओजमय आकाश पुरुष के हृदय में कामना की लहरें उठने लगी। वह मानों किरण सोपान के सहारे धरती पर उतर आया आकर्षण की इस शक्ति को देखकर पुरुष प्रफुल्लित हुआ तथा अपने कर्म के ओर प्रेरित हुआ। इसतरह नारी ही नर की सच्ची शक्ति हैं। वह शक्ति उसके दुःख सहने में दिखाई देती हैं। पौरुष की सफलता नारी के त्याग और बलिदान में निहित हैं।

3) **श्यामल द्रौपदी**-- द्रौपदी की अपनी एक खास विशेषता हैं। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के दिव्य नारी चरित्रों में वही एक साँवली हैं। द्रौपदी पवित्र यज्ञकुंड से उत्पन्न हुई थी और होमज्वाला की शिखा के समान कृष्ण वर्ण हैं इसलिए वह कृष्णा नामसे भी परिचित रही हैं।" 6 आकाश का वर्ण भी कृष्ण मालूम पडता हैं और वह वर्ण यज्ञाग्नि की उर्ध्वगामिनी शिखा तथा नर की जीवनीशक्ति , उसकी उर्ध्वगामिनी चेतना रुप द्रौपदी का भी हैं। इस बारे में कवि का कथन हैं"द्रौपदी का चरित्र दिव्य हैं, पौराणिक पात्रों में वही अकेली हैं, जो श्याम वर्ण हैं। "उसका श्याम वर्ण उसकी अनंत महिमा का प्रतीक है कवि के शब्दोंमें --

"कृष्णा मधुकरी नहीं,
लपट है यागानल की कृष्णा
युग परिवर्तन के हेतु
क्रांति उतल पातल की तृष्णा।"8

इस तरह कृष्ण वर्ण द्रौपदी सिर्फ भिक्षा माँगनेवाली नहीं हैं तो यज्ञ की अग्निशिखा से उत्पन्न कृष्ण वर्ण हैं। वह युग परिवर्तन के हेतु क्रांति की तीव्र इच्छा मन में धारण करनेवाली हैं। द्रौपदी के कारण ही इंद्रप्रस्थ के भूप बननेपर उनकी उन्नति होती हैं। लेकिन पांडव जब द्रौपदी को मात्र भोग्या समझकर दॉवपर लगाते हैं, तब उन्हें उसका प्रायश्चित करना ही पडता हैं।

4) दहन और सहनशक्ति से युक्तः- नारी सहनशीलता की मूर्ति होती हैं। वह एक ऐसी अद्भुत शक्ति हैं जो पुरुष के लिए दुःख, पीडा, यातना सहती हैं। पौरुष की सफलता नारी के त्याग और बलिदान में निहित हैं। जीवन के इतिहास को देखनेपर इस बात की पुष्टि होती हैं कि नारी के आत्मोत्सर्ग के द्वारा ही नर का जीवन सार्थक और सफल होता हैं। नारी स्वयं दुख की आग में जलकर पुरुष के विजय पथ को प्रशस्त करती हैं। कवि का कथन हैं--"द्रौपदी में मैंने भारतीय नारी के तेजबल का गुणगान किया हैं। नारी की दहनशक्ति और और दहन सहन शक्ति की ओर बार बार संकेत किया है।"9 नारी की दहन-सहनशक्ति में पुरुष की विजयश्री वास करती हैं--

"दहनशक्ति से मूल्य चुकाती,
नारी नर की जय का
है नारी की सहनशक्ति में
संचित वेतु विजय का।"10

जब युधिष्ठिर अपना सारा राजपाट द्युत में हारकर अंत में द्रौपदी को भी दॉवपर लगाते है और हार जाते है तब दुराचारी दुःशासन द्रौपदी को भरी राजसभा मे निर्वसन करने का निर्लज्ज प्रयास करते है तो भगवान श्रीकृष्ण द्रौपदी का चीर बढाकर उसकी लाज बचाते है कौरवो द्वारा नारी का यह अपमान उन्ही के विनाश का कारण बनता है। पांडव द्रौपदी के द्वारा प्रतिशोध के लिए प्रेरित होते है, फलस्वरुप द्रौपदी ने धर्मराज को विजयी बनाने के लिए अपने पाँचो पुत्रोंका बलिदान दिया। युध्दविजय के उपरांत भी भ्रमजाल और आत्मग्लानि में फँसे युधिष्ठिर को अश्वत्थामा से मणि लेकर सत्य की स्थापना के लिए प्रेरणा देकर पथप्रदर्शन करती है। वह अश्वत्थामा के दुष्कृत्य का बदला लेना चाहती है, वह युधिष्ठिर से कहती है--

"दंड धरो, दंड धरो, बनो दडपाणि पार्थ।
द्रोणी की मणि लेलो, राजधर्म पालनार्थ।"।।

इसतरह जीवनीशक्ति रुपी द्रौपदी दहन-सहनशक्ति से युक्त होती हैं।

5) नारी सुलभ कोमलता-- द्रौपदी की गणना भारत की पाँच पवित्र नारियो में होती हैं। स्वयंवर के उपरात जब द्रौपदी हस्तिनापुर में आती हैं, तब सभी उसकी सौंदर्य दीप्ति से प्रभावित होते है, कुरुकुल के पालक पितामह भीष्म आनदमग्न हो गए। द्रौपदी के चरण रखाते ही कौरवो का वह प्रासाद उसके रुप और शोभा से सहसा आलोकित हो उठा। द्रौपदी की तृप्तिदायक यह शोभा दुर्योधन के वज्राहत मन में जलनकी ज्वाला सुलगा देती है।

'उत्तरजय' में कवि द्रौपदी के भावुक, कोमल, हृदय का परिचय देता है, जब द्रौपदी युधिष्ठिर को द्वारिका के विनाश और श्रीकृष्ण के प्राणांत का समाचार सुनाती है तो उसके नेत्र भर आते है-

नयनो में कमलनयनि, जल क्यों भर आया?
मुखपर हे इन्द्रमुखी किस निषाद की छाया?।2

इसतरह नारी सुलभ कोमलता द्रौपदी में दिखायी देती हैं।

इसप्रकार 'द्रौपदी' इस काव्य की नायिका है। वह महाभारत की प्रमुख नारी पात्र है, द्रुपद की अयोनिजा पुत्री है। उसमें एकनिष्ठ पतिप्रेम, आदर्श पतिव्रता, नारी धर्म की सीमाओं का ज्ञान, पति के सुख दुखो में सहभाग आदि महाभारत की द्रौपदी की प्रमुख विशेषताएँ है। कविवर नरेंद्र शर्माजीने महाभारत के आधारपर द्रौपदी के चरित्र को विभिन्न रुपो में चित्रित किया है। कवि ने द्रौपदी को जीवनीशक्ति , कर्मप्रेरणा और तृष्णा, नर की वरण्या , पांडव कुल की शशिप्रभा, युग परिवर्तन के हेतु क्राति, पंचतत्वो की कल्याणी, अपराजिता, आदि नामो से संबोधित किया है। इसमे संदेह नही कि उत्तरजय काव्य में द्रौपदी के चरित्र की व्यंजना अधिक नही हुई है। क्योकि 'उत्तरजय' के पहले कवि 'द्रौपदी' की रचना कर चुके थे, फिर भी काव्य के जिन प्रसगो में द्रौपदी के चरित्र की अवतारणा हुई है वह बडे ही मर्मस्पर्शी रुप में व्यक्त हुआ है। उसमे हमें नारी का सहजरुप देखने को मिलता है।

----युधिष्ठिर----

द्रौपदी और उत्तरजय इन दोनो काव्यो में युधिष्ठिर का चरित्रांकन व्यापक रुप से हुआ है। द्रौपदी काव्य में द्रौपदी के बाद युधिष्ठिर के चरित्र को महत्व दिया है, तो उत्तरजय काव्य के नायक युधिष्ठिर ही है। कवि ने उनका बडाही उर्जास्वित, तेजस्वी, और असाधारण व्यवितत्व हमारे सामने प्रस्तुत किया है। युधिष्ठिर पाँच पांडवो में आचार विचार की

दृष्टि से श्रेष्ठ और जेष्ठ तो थे, साथ ही धर्मपरायण, अंतर्मुखी, और मूल्यान्वेषी व्यक्ति वे, रुपमें चित्रित किया है। उनके व्यक्तित्व में हम निम्नलिखित विशेषताएँ देख सकते है--

1) आकाशतत्व के प्रतीक- पाँचो पांडव पाँच महातत्व के प्रतीक है।

कविने युधिष्ठिर को आकाशतत्व के प्रतीक के रुप में अंकित किया है--

"नरश्रेष्ठ युधिष्ठिर जेष्ठ
स्वयं आकाशपुरुष तनुधारी।"।3

युधिष्ठिर आकाश की तरह उध्वचेता है, आकाश आदर्श का प्रतीक है, जिसे धरती की वासना और कलुष स्पर्श नही कर पाते। युधिष्ठिर आदर्शवादी है। पृथ्वी का मटमैलापन उनको नही भाता, यह यह मटमैलापन यथार्थ का प्रतीक हैं, पृथ्वीपर दुख हैं, छल है, प्रवंचना है युधिष्ठिर इससे बचना चाहते हैं इसलिए महाभारत के युध्द में विजयी होकर भी स्वयम् को अपमानित महसूस करते है, राज्यधर्म को स्विकारने से इन्कार करते है। और गुरुपुत्र अश्वत्थामा से मणि नहीं छिनना चाहते। युधिष्ठिर स्वच्छ आकाश की तरह विकाररहित और विरागी थे।

2) करुणा के प्रतीक- युधिष्ठिर का चरित्र अत्यंत महान आदर्श हैं। वे क्षमा, त्याग, करुणा की प्रतिमूर्ति है। महाभारत के नरसंहारी युध्द में जो विनाश हुआ उससे उनके हृदय में करुणा भर उठती है, युध्द के उपरांत प्राप्त विजय को स्वीकारने के लिए तैयार नही, क्योकिं वे अपने मनमें समझते है, उनके ही कारण अभिमन्यु का वध हुआ, उनके ही अर्धसत्य कहने से गुरु द्रोणाचार्य का प्राणांत हुआ उसी तरह जिस दुराभिमानी दुर्योधन के कारण कुरुक्षेत्रपर भीषण नरसंहार हुआ उसके प्रति भी द्वेषभावना उनके हृदय में नही है, इसलिए वे कहते है--

क्षमा करो दुर्योधन करता
क्षमायाचना बंधु युधिष्ठिर
मेरे प्राणो का उद्वेलन
बन गया था मुझको निष्ठुर।'।4

इसलिए वे दुर्योधन से क्षमा मांगते है, उससे बैर भुलकर अपना जीता हुआ राज्य लौटना चाहते है।

3) धीरोदात्त- धर्मराज युधिष्ठिर में धीरोदात्त नायक के सभी गुण विद्यमान थे। उनका चरित्र, शात, धीर, गभीर, और उदात्त है वे वनवास के दिनो मे भी हतबल नही

होते तथा संघर्ष के दिनों में उनका विवेक ही पथप्रदर्शक होता हैं। द्युत में अपना सब कुछ हार जाने के बाद बडे ही बेचैन तथा विचलीत हुए फिर भी हृष्ट दुःशासन भरी सभा में भीष्म द्रोण और कृपाचार्य जैसे महाबलीा और नीतिज्ञ कि सामने द्रौपदी का चीरहरण कर रहा था उसी समय द्रौपदी के निर्वसना होने पर भी धीरज नहीं छोडते क्योंकि--

सहज पाई हुई निधि को, सहज खो देता नृपति।
यदि लिया यह मान मेरी राज्य निधि में राष्ट्रपति।"।5

युधिष्ठिर अपना राष्ट्र नष्ट होनेपर भी अस्थिर नहीं होते। उसी तरह वे एक आदर्श शासक के रुप में छत्तीस वर्षोतक सुशासन करते हैं। उनके शासन में पृथ्वीपर नया युग आता हैं। पृथ्वी के घाव भर जाते हैं। युध्द से आहत उसकी काया स्वस्थ रुप धारण करती हैं, चारों ओर सुख समृध्दि का साम्राज्य छा जाता है।"।6 इसतरह युधिष्ठिर एक धीरोदात्त राजा हैं।

4) मानसिक अंतर्द्वंद्व- युधिष्ठिर का चरित्र प्रतीकात्मक और पौराणिक होते हुए भी शर्माजीने उसमें आधुनिकता का रंग भर दिया है क्योंकि उनमें अंतर्द्वंद्व विद्यमान है और उनका चरित्र पीडा भोगी हैं। वे अपना स्वभाव और नियति के द्वंद्व में बँटे हुए थे। यही द्वंद्व ही उनकी पीडा का कारण था। महाभारत युध्द के पश्चात वह यह नही सोच पाते कि यह उनकी जय हैं या पराजय। युध्द में किया गया अधर्म का कृत्य उन्हें कचोटने लगता हैं--

"धर्म सार्थ नहीं युध्द यद्यपि था धर्मकेतु।
या अधर्म अपनाया मैंने जयप्राप्ति के हेतु।"।7

कर्ण जन्म का रहस्योद्घाटन, गुरु द्रोणाचार्य की हत्या, भीष्म पितामह की हार, अभिमन्यु का निर्मम वध , युध्दोत्तर स्मशान का दारुण दृश्य, आदि घटनाओं के कारण युध्द में प्राप्त विजय को विजय नहीं समझते क्योंकि युध्द में हुए भीषण नरसहार एव अपने आत्मीयजनो के बलिदान को देखकर उनका मन उन्हे धिक्कारने लगा फलस्वरुप उन्हें लगने लगा कि --

"धर्मराज को धिक् धिक्
धिक्कार रहा मन उनका,
तुमपर मरा मिटनेवाले सब
तुमसे बहुत बडे थे।"।8

युध्द के विनाश और संहार को लेकर उनके मन में द्विधा हैं , उनका मन अशांत बन जाता है और उन्हें अपनी विजय भी पराजय के समान लगती हैं उसीसमय उलुक उन्हें समझा देता हैं--

"धर्म कहते हो, किन्तु मर्म अर्थकाम।

अपना लो राजधर्म, धर्मराज व्यर्थ नाम।"19

युधिष्ठिर के विचारों और परिताप की धूमिल छाँव में भटकता धर्मराज का अंतर्मथन उनकी चारित्रिक पवित्रता का संकेत करता है। उनके इन विचारोंसे उनके चरित्र की उज्वलता उजागर होती हैं।

महाभारत युध्द के पश्चात युधिष्ठिर के मन में पश्चात्ताप की जो आग सुलगती हैं उसका बडा मर्मस्पर्शी और हृदयग्राही वर्णन कविने किया हैं जिस युध्द में अपने प्रिय स्वजनों का नाश हुआ हो, जिस युध्द के लिए अधर्म का मार्ग अपनाना पडा हो, जिस युध्द में अपने गुरु के प्राणों से हाथ धोने पडे हो, जिस युध्द में धर्म नही, अधर्म की विजय हुई हो उस युध्द की विजय लेकर हर्ष प्रकट करना कहाँतक उचित हैं युधिष्ठिर कहता है--

'मेरे हित हुआ [illegible] शीर्ष गुरुजन का देह पात

गुरुवर के साथ किया मैंने विश्वास घात।"20

अंत में युधिष्ठिर के मनकी द्विधा शांत होती है। राजधर्म को स्वीकार कर वे छत्तीस वर्षतक पृथ्वीपर राज्य करते हैं। यादव कुल का निमाश और श्रीकृष्ण की मृत्यु का समाचार सुनकर वे संसार की नश्वरता से विरक्त हो जाते हैं और राजपाट त्याग देते हैं।

5) <u>निराभिमानी</u>- युधिष्ठिर महाभारत युध्द में विजयी हुए, द्रौपदी स्वंयवर में द्रौपदी को प्राप्त किए, परंतु इसका तनिक भी अहकार उनके मन में नही हैं। वे तो विनय और शालीनता की मूर्ति है। राज्यधर्म की शिक्षा लेने वे धृतराष्ट्र के पास जाते है। राज्यधर्म ग्रहण करने के पहले वे राज्यधर्म की शिक्षा लेते हैं।"21 माता कुंती की पद वंदना करते है, यद्यपि युधिष्ठिर आकाशतत्व के प्रतीक हैं, देवपुत्र हैं, पृथ्वी की सेवा करने में ही वे अपनी जीवन की सार्थकता समझते हैं, युधिष्ठिर कहते हैं--

"धरती का मटमैला आँचल ही नीलांम्बर

मिट्टी की सेवा बिन,मुक्त नही होता नर।"22

वे समझते हैं मनुष्य जबतक पार्थिव संसार की सेवा नहीं करता, तबतक अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो सकता। जिसप्रकार निर्मल और स्वच्छ आकाश में वर्षा के काले बादल नहीं उमडते, उसीप्रकार मिट्टी की सेवा करनेवाले मनुष्य के हृदय में बादलों के समान संकल्प-विकल्प नहीं उमडते।'23 इसतरह युधिष्ठिर एक सर्वोच्च विजयी पुरुष होते हुए भी निराभिमानी है। अभिमान की गंधतक उनके हृदय को नहीं छूती।

6) परिवर्तनशील चरित्र- प्रारंभ से लेकर अंततक युधिष्ठिर का चरित्र परिवर्तनशील हैं। उनके चरित्र में परिवर्तन के विविध प्रसंग आते है। महाभारत युध्द में हुए संहार को देख वे बडे व्याकुल होते हैं, उन्हें कुछ भी नहीं सुझता कि क्या करना चोहिए और क्या नही। वे राजकाज को स्वीकारने से इन्कार कर देते हैं लेकिन उलुक? समझा देता हैं--

'याद करो राज-हरण, विपिन-गमन हृदय-दहन।
भरी सभा बीच खींच, द्रुपदा का केश-गहन।
अरे क्लीव। . . अपमानित तेरी जीवनीशक्ति।
निर्बल का संबल कब बनती हैं कृष्णभक्ति?"24

इसतरह उलुक को समझाने तथा पितामह भीष्म की आज्ञा से उनका मत परिवर्तित होता है, और पृथ्वी माता की सेवा करने के लिए राजा बनते हैं और अंतमें यादव कुल का नाश तथा श्रीकृष्ण की मृत्यु का समाचार सुनकर राजकाज को छोडकर बैरागी बन हिमालय की ओर प्रस्थान करते हैं इसप्रकार युधिष्ठिर के चरित्र में परविर्तनशीलता दिखाई देती हैं।

7) अहिसावादी- धर्मराज युधिष्ठिर अहिंसावादी है। वे हिंसा का बदला हिंसा से नहीं लेना चाहते। युध्द के अंतिम दिन गुरुपुत्र अश्वत्थामा पांचाली शिबिर में आकर द्रौपदी के पाँचो पुत्रो का संहार करता हैं और द्रौपदी पुत्रहीना हो जाती हैं, इससे द्रौपदी के मन में की भावना जाग उठती है।"25 इस लिए वह युधिष्ठिर से अश्वत्थामा के मस्तक की मणि लेना चाहती हैं, तो युधिष्ठिर कहते हैं--

"हिंसा से प्रतिहिंसा , रुकता नहीं चक्र
वृत्र न अश्वत्थामा पांडुपुत्र नहीं शक्र।"26

श्रीकृष्ण के समझाने पर भी वे अश्वत्थामा की मणि छिनना अनुचित समझते है और अंतमे श्रीकृष्ण ही मणि छीनते है। इसतरह युधिष्ठिर का चरित्र अहिंसावादी है।

8) भारतीय सस्कृति का आदर्श रुप-- युधिष्ठिर के चरित्र में हमे भारतीय संस्कृति का आदर्श रुप दिखाई देता हैं। हमारी महान संस्कृति का आदर्श यह है कि मनुष्य का जीवन कर्मयोग की साधना से परिपूर्ण होना चाहिए। उसे इस संसार में रहकर जीवन के सुख दुख सत्य, न्याय और धर्म की रक्षा तथा सत्व एवं सत्ता की प्राक्ति के लिए कितना कठोर, सघर्ष, कैसा अपूर्व त्याग और बलिदान करना पडता है, महाभारत का युध्द इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।'27 अपने कर्तव्य को पूरा करने के पश्चात ही संसार से विरक्त होना चाहिए युधिष्ठिर का

जीवन भी ऐसा ही हैं।

9) अव्यावहारिकता-- युधिष्ठिर अपने मन में अपना आत्मपरीक्षण करते हैं कि मैं निश्चल और श्रेष्ठ आकाशपुरुष अधिकारी हूँ। काम और अर्थ की तृष्णा से मुक्त हूँ, मै विवेकी हूँ पर संसार नही हूँ, अव्यावहारिक हूँ तभी तो द्रौपदी जैसी पावन नारी को भोग्या मानकर जुए के दॉवपर चढा दिया और उसमें पराजित भी हुए।'28 युधिष्ठिर के व्यापक दृष्टिकोण, राग, द्वेष रहित निर्विकार स्वभाव और द्युत के व्यसन का यही रहस्य हैं-- कवि के शब्दों में--

"युधिष्ठिर आकाश की ही तरह शून्य विकार।
वह न जाने अस्थि फॉसि फेकता संसार।"29

युधिष्ठिर क्षमा, त्याग, और करुणा की मूर्ति होते हुए भी उनमें अव्यावहारिकता भी दिखाई देती है।

इसतरह युधिष्ठिर का चरित्र एक आदर्श मानव के संघर्ष और संघर्ष के उपरांत विजय श्री प्राप्त करनेवाले सौभाग्यशाली मानव का चरित्र हैं। उनका सिध्दात है कि नारी की अवहेलना से नर सर्वनाश को प्राप्त करता हैं और उचित सन्मान करके विजयश्री पाता है। युधिष्ठिर ने युध्द में विजय पाई नारी की ही प्रेरणा से, समस्त देश में धर्मराज्य की स्थापना की अश्वमेध यज्ञ किया, वह सबकुछ द्रुपद का पुण्यबल ही था। महाभारत में युधिष्ठिर का जो चरित्र हमें मिलता है उससे कही अधिक उदात्त आदर्श और प्राणवान चरित्र द्रौपदी और उत्तरजय' काव्य में प्रस्तुत किया है। महाभारत युध्द के पश्चात युधिष्ठिर के मन में जो सकल्प-विकल्पउठते है, वे युधिष्ठिर के चरित्र के मौलिक रुप है । कविने अपने परपरा पौराणिक चरित्र की रक्षा करते हुए उसकी प्रतिकात्मक व्याख्या की हैं।

----दुर्योधन----

दुर्योधन महाभारत का प्रधान खलनायक पात्र हैं। वह धृतराष्ट्र की अंधनग्न वासनाबीज का ही अंकुरित रुप है। दुर्योधन अंधवासना से युक्त सकीर्ण, ईर्ष्यालु, जिद्दी, दुर्नीतिज्ञ, अधर्मी, अविवेकी, आततायी, चंचल, घमंडी, कुटिल सत्ता के लोभ से पराभूत व्यक्तित्व है। दुर्योधन पांडवों से बैर मानता था। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को राजा बनाना चाहा पर वह इतना उद्दंड है कि अपने पिता के आदेश पर भी पांडवो को उनका हिस्सा देने से इन्कार कर देता है क्योंकि--

'जो कर न सके धृतराष्ट्र
रही जिसके करने की इच्छा
सुत वही वासनाबीज
दबा पाई जिसको न अनिच्छा।"30

धृतराष्ट्र अपने जीवन में जो कर न सके तथा जिसके करने की इच्छा रही, उन अधूरी इच्छाओं-वासनाओ के बीज शत पुत्रो में दबे थे। सुयोधन वही वासनाबीज थें। धृतराष्ट्र अपनी जिन इच्छाओं को कार्यान्वित न कर सकें, वे दमित वासनाएँ सुयोधनके तन तन के रुपमें सक्रिय हो उठी। धृतराष्ट्र की इच्छाओ को दुर्योधन ने ही पूरी की।

जब पांडव अपनी शूरवीरता के बलपर दीप्तिमान द्रौपदी को लेकर हस्तिनापूर आते हैं तब उनकी अनुपम अपूर्व सुंदरता देख दुर्योधनउसे अपना बनाने की कुटिल योजना तैयार करने लगता हैं। अपनी दुष्टता से वह पाडवों को उनके हिस्से में उसर-बंजर खांडव वन देता है, वहाँ भी पांडव अथक परिश्रम से सुंदर नगरी बसाते हैं। पांडवो की यह श्रीवृध्दि देखकर दुर्योधन जलने लगता हैं। अपने मनकी शांति के लिए अपने कुटिल दुष्ट मामा शकुनि की सहायता से पांडवों को द्युत, छल, लाक्षागृह में दहन जैसी योजनाएँ बनाकर पांडवोंका जीवन असहय बनाता है।

दुर्योधन ने शकुनि की सहायता से जुए में युधिष्ठिर के चारों भाई, द्रौपदी और सारा राजपाट जीत लिया भरे राज दरबार में दुर्योधन ने अपने छोटे भाई दु:शासन को द्रौपदी का वस्त्रहरण करने का आदेश दिया, तथा द्रौपदी से अपनी जांघपर बैठने का संकेत दिया। उसी समय भीम ने अपनी गदा से दुर्योधन की जांघ तोडने का प्रण किया। पतिव्रता नारी का यह अपमान उसके विनाश का कारण बना।

कविने दुर्योधन के चरित्र को धृतराष्ट्र की दमित इच्छाओं और अंधी ममता के प्रतिरुप में विकसित किया है। यहि कारण हैं कि माता गांधारी के सहृदय होने पर भी धृतराष्ट्र की अंधी वासना और दमित इच्छा रुपी बीज दुर्योधन में फलित होता हैं। जब बीज ही अच्छा न हो तो फल उसका कैसे अच्छा होगा।?3। दुर्योधन जो कहता करता हैं वह सब धृतराष्ट्र के अपने अचेतन की अभिव्यक्ति हैं। उन्होने माता गांधारी के कोमल, विवेकी, सहृदय, ममत्व को ठुकरा दिया था। कविने दुर्योधन को इसतरह चित्रित किया हैं--

"शतखण्ड अहंता-पुंज
तनय सौ गांधारी ने जाये।
पा कर बबूल का बीज,

धरित्री कैसे आम उगाये?"32

दुर्योधन एक शक्तिशाली, महाबलि, महावीर, होकर भी नारी अपमान के कारण उसे अपने जीवन से हाथ धोना पडा। मृत्यु से पूर्व अश्वत्थामा को उन्होंने अपना सेनापति बनाया और पांडवकूल का विनाश करने को कहा। अश्वत्थामा के मुख से पांडव पुत्रों का विनाश सुनकर उसने संतोष प्रकट किया और अपने प्राण त्याग दिये। मृत्यु के पश्चात दुर्योधन को स्वर्ग मिला। दुर्योधन को कलि का अवतार कहा गया हैं। इसतरह 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' दोनों काव्यों में दुर्योधन का चरित्र चित्रण संक्षेप में होते हुए भी बडे मार्मिक ढंग से किया हैं।

धृतराष्ट्र --

धृतराष्ट्र महाभारत कथा के एक विशेषपात्र है। वे जन्मांध हैं। उनसे अपने अंधत्व के कारण जीवन में वे अनेक बार नाकारे गए। धृतराष्ट्र पर स्नेह की वर्षा करनेवाली आदर्श पत्नी गांधारी उन्हें उनकी हीन-दीन भावना से उपर उठाने की अनेक बार कोशिश करती हैं। अंधे धृतराष्ट्र की दमित वासनाओ ने शतपुत्रो के रुप में जन्मग्रहण किया हैं जो स्वेच्छाचारी, दुराचारी हैं। अंधे धृतराष्ट्र का इन शत पुत्रों पर कोई नियंत्रण नहीं रहता। वे अपने पुत्र रुप शत कामनाओ के दास हैं। स्वामी नहीं।

जब पाँच पांडव द्रौपदीसहित हस्तिनापुर जाकर धृतराष्ट्र से राज्य का आधा हिस्सा मागते हैं तो वे विचलीत होते है, लेकिन युवराज पदका अधिकार छोडने को दुर्योधन नकार देते हैं तब विदुर धृतराष्ट्र को इस बात का न्याय करनेके लिए कहते हैं--

"अम्बिकानदन करे अब न्याय, बन निस्वार्थ?
प्रतिष्ठित युवराज पद पर क्या नहीं था पार्थ?"33

धृतराष्ट्र एक राजा होने पर भी पुत्रप्रेम में इतने अंधे हैं कि पांडवो का हक्क देने से इन्कार कर देते है। बदले मे सिफ खांडवप्रस्थ की भूमि दे देते है। पाडव इंद्रप्रस्थ की भूमिपर इंद्रप्रस्थ नाम का नया नगर बसाते है। लेकिन दुर्भाग्य से वह द्युत में गँवा देते हैं और वन की ओर प्रस्थान करते हैं। कुलवधु द्रौपदी का उसने न केवल अपमान किया बल्कि भरी राजसभा में दुःशासन ने उसे निर्वसन करनेका प्रयत्न किया तो भी धृतराष्ट्र लाचार बेबस बनकर मौन रहे। उसीतरह दुर्योधन और शकुनि पांडवोंसे संबधित कुटिल योजनाएँ बनवाते है तो उसे भी वे मौन सम्मति देते है, इसप्रकार धृतराष्ट्र न केवल आँखोसे अंधे है तो वे विवेक से भी अंधे है।

जीवनीशक्ति द्रौपदी अपने पाँचो पतियो के साथ जब हस्तिनापुर के शत

हस्तिद्वार पार कर राजमहल मे प्रवेश करती हैं तो नियति ने हुंकार कर धृतराष्ट्र का राज्यशासन हिलाया।'34 सभी लोगोंद्वारा पांचाली की प्रशंसा सुनकर धृतराष्ट्र भयभीत हुए वे मन ही मन समझ गये कि अपने सौ पुत्रों के इतने दिनों के सारे दॉवपेच व्यर्थ हो गए। धृतराष्ट्र की इच्छा भी थी कि वे पांडवों की विजय न माने परंतु बलपूर्वक उन्हें मानना पडा कि पांडुपुत्र जीत गये,

'चाहा कि न माने किन्तु,
मानना पडा पांडुसुत जीते,
रीते हाथो वह रहे,
क्लेश दुख सहे , दिवस वह बीते।' 35

अंधे धृतराष्ट्र अंधी ममता से पीडित है, इसलिए यह पूरे भटक जाते है।

फलस्वरुप महाभारत का युध्द होता हैं जिसमें उसके सौ पुत्रों का संहार होता हैं , महाभारत युध्द की भीषण परिणति को लेकर धृतराष्ट्र स्वंय अपने लिए कहते है--

अन्तर्व्रण: रिसता है, सकता ही नहीं स्त्राव।
रोते हैं रक्त वहा, मनके सौ छिपे घाव।"36

अपने इस गहन दुख को धृतराष्ट्र शांत करते हैं। वे अपना राज्य युधिष्ठिर को सौंपते है। इसतरह धृतराष्ट्र के चरित्र की व्यंजना 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' काव्य में अधिक नही हैं, लेकिन जो थोडा बहुत अंश आया है, वह बडा ही मनोवैज्ञानिक और हृदय को छूनेवाला है। धृतराष्ट्र का यह चरित्र वस्तुत यथार्थ और आदर्श का समन्वय हैं, प्रारभ मे हम उनके यथार्थवादी रुप को पाते है, और अंत में यूधिष्ठिर को राजकाज सौंपकर अपने आदर्शवादी रुप को प्रकट करते है।

--गांधारी--

गहाभारत के प्रमुख पात्रोंमें गांधारी का अनन्य साधारण महत्व हैं। वह पतिपरायणा है। अपने अंधे पति के लिए उसने अपने ऑखोपर आजीवन पट्टी बांधी। वह सुसंस्कृत तथा आदर्श नारी हैं।" गांधारी ने शता पुत्रो को जन्म दिया तथा उनपर अच्छे संस्कार करनेका प्रयत्न किया मगर अंधे धृतराष्ट्र की दमित वासनाओं ने शतपुत्रो के रुप मे जन्म ग्रहण किया।"37

गांधारी शकुनि की बहन हैं, पर दोनो के आचार विचार में भारी विषमता है। गाधारी के हृदय में पांडवों के प्रति अपार स्नेह तथा द्रौपदी के प्रति अशेष ममता है कवि के शब्दोंमें --

"है पातिव्रत की मूर्ति,
पूर्ति दम संयम की गांधारी।"38

पतिव्रत धर्म की साक्षात प्रतिमा गांधारी की भी हार्दिक इच्छा थी कि कौरवो और पांडवो का भविष्य मंगलमय हो इसी कारण वह द्रौपदी को स्नेहालिंगन देती हैं। अपने पति, भाई, और पुत्रों की कुटिलता को मिटाना चाहती है मगर उसमें वह असफल रहती हें, कौरवोंद्वारा द्रौपदी के अपमान से वह अत्यंत क्रोधित होती हैं तथा अपने भाई शकुनि से नफरत करने लगती है। महाभारत के युध्दभूमिपर विजयश्री प्राप्त करने के लिए, जानेवाले अपने पुत्रोको विजयीभव का आर्शिवाद नही देती। गांधारी का सबसे बडा दुर्भाग्य यही रहा कि उन्होनें जिन पुत्रोंकों अनदेखे ही जन्म दिया था उनके शवों को देखने के लिए नियति ने उन्हें विवश कर दिया। गांधारी का मातृत्व अपने शतपुत्रो की लाशो को देखकर विचलित होता है और उत्तेजनामें वह देवकीपुत्र कृष्ण को शाप देती हैं। पर अंत में कौरवकुल की रक्षा के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना करती हैं कि--

"क्षीणचरण धर्म, दग्ध-पद-नख हैं धर्मराज।
ध्वंस शेष कुरुकुल की केशव ही धरे लाज।"39

इसप्रकार पं. नरेंद्र शर्मा ने गांधारी का एक आदर्श माता तथा सती-पति परायणा नारी के रुप में सफल चित्रण किया है। 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' दोनों काव्योमें गाधारी का चरित्र जहाँ कही भी उभरा है उसमे सहज मनुष्यत्व की तरलता मूर्तिमान हो उठी है।

---शकुनि---

पं. नरेंद्र शर्मा लिखित 'द्रौपदी खंडकाव्य में शकुनि एक महत्वपूर्ण पात्र है। वह अत्यंत कुटिल , दुष्ट, दुर्नीति, अधर्मी, अत्याचारी, स्वार्थी, लोभी, ईर्ष्यालु हैं। गांधारी उसकी बहन हैं, मगर दोनों के आचार-विचार में जमीन आसमान का फर्क है। पितामह भीष्म गांधारी का अपहरण करके अंधे धृतराष्ट्र से उसका विवाह करते हैं। जिससे शकुनि भीष्म पितामह तथा संपूर्ण कुरुकूल का नाश करनेका बीडा उठाता है। उसके मन में प्रतिहिंसा की आग धधकने लगती है, फलस्वरुप उसने पाडवो और कौरवो को कभी निकट नही आने दिया। पांडवोके लिए कृष्णका विवेकपूर्ण सहाय मिलता है, तो कौरवों को शकुनिमामा की कुटिल दुष्टतापूर्ण योजनाएँ प्राप्त होती है।

शकुनि अपनी बहन के यहाँ रहकर प्रतिशोध की तलाश करता है। गांधारी का द्रौपदी तथा पांडवोपर का अपार स्नेह शकुनिको चिंतित बनाता है। वह महाराज धृतराष्ट्र की अंधी ममता तथा दमित वासनाओं को पहचान कर उन्हें पांडवों के विरुध्द बना देता है। पांडव जब द्रौपदीसहित हस्तिनापूर आते हैं तो द्रौपदी के सौदर्य रुप को देखकर उसकी

प्रतिशोध की आग भडकती हैं कवि के शब्दोमे--

"शत हस्तिद्वार कर पार,
सिहिंनी धॅसी हस्तिनापूर में।
आनद पुलक की लहर
उठी शकुनि के निष्ठुर उर में।' 40

गांधारी एवं द्रौपदी के प्रेम गिलन से शकुनि चिंतित हो जाता हैं। पाडवो को उनके हिस्से में उसर-बंजर खांडववन देनेकी कुटिल योजना शकुनि ही बनाता है लेकिन वह विफल हो जाती हैं क्योकि पांडव वहाँ अथक परिश्रम से इन्द्रपुरी सी नगरी बनाते है। दुर्योधन पांडवो की श्री समृध्दि देखकर तथा दिव्या द्रौपदी के सौंदर्य को देखकर जलने लगता हैं अपने हृदय की अग्नि को शांत करने के लिए वह अपने मामा की सहायता लेता हैं। शकुनि को यह सुअवसर मिलता हैं, शकुनि दुर्योधन को द्युत का आयोजन करने को कहता हैं क्योकि---

"युधिष्ठिर को व्यसन है, पर नही जिसका ज्ञान।
द्युतक्रीडा की कला वह सुना आयुष्मान।"4।

शकुनि युधिष्ठिर की निर्बलता सर्वस्व भी दॉवपर लगाने की वृत्ति तथा निरंतर विजयों से उत्पन्न हुयी अंह की भावना से पूर्ण परिचित था। वह जुए में पांडवो को हराकर उनकी भाग्यलक्ष्मी का हरण करने की योजना बनाता हैं जिसमें वह कामयाब होता है। 42 इसप्रकार शकुनि अपनी व्यक्तिगत ईर्ष्या तथा प्रतिशोध की भावना कभी कौरव पाडवों को जुआ खेलकर, कभी प्राणघाती षडयत्रों की रचना कर तथा कभी जीवनीशवित द्रौपदी का अपमान कर युध्द की दारुण विभिषिका में ढकेल देता है जिससे कुरुकुल का सर्वनाश हो जाता है।

इसप्रकार द्रौपदी खंडकाव्य का प्रतिनायक भलेही दुर्योधन है, मगर खलनायक की सच्ची भमिका कुटिल शकुनि ने निभायी है। दुर्योधन केवल शकुनि की दुष्ट अन्यायी योजनाओ का साधन था। महाभारत का अठारह दिवसीय नरसहारी युध्द की आग सुलगाने में उन्होंने ईधंन का काम किया, इसलिए तो कविने उसे द्वापर युगका ईधन कहा है। 43 सच्चे अर्थोमें शकुनि ही द्रौपदी खडकाव्य का खलनायक है ऐसा हम निस्संकोच कह सकते है, लेकिन उत्तरजय में शकुनि का नाममात्र संकेत मिल जाता है। इसतरह शकुनि एक महत्त्वपूर्ण पात्र है।

--अश्वत्थामा--

अश्वत्थामा पांडवो और कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र थे। वे महाभारत युध्द में कौरवो की ओरसे लडे थे। दुर्योधन द्वारा इन्हे महाभारत युध्द का अंतिम सेनापति

बनाया गया था। द्रौपदी काव्य में उनके नामका सिर्फ संकेत मिलता है, तो 'उत्तरजय' में वह विरोधी पक्ष का पात्र है। यथार्थ के धरातल पर कवि ने उसके चरित्र की महत्त्वपूर्ण विशेषताओ को हमारे सामने रखा है--

1) **प्रतिशोध की मूर्ति**--महाभारत युध्द में गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा कौरव पक्षकी ओरसे अंतिम सेनापति थे। धोखे से अपने पिता गुरु द्रोणाचार्य के मारे जाने, दुर्योधन के घायल होने और युध्द में कौरव पक्ष पराजय ने अश्वत्थामा को क्रोध से पागल बना दिया । प्रतिशोध की आग में वे जलने लगे। अंत में यूध्द की अंतिम रात्रि में उन्होंने पांडवो के शिबिर में घुसकर द्रौपदी के पाँचो पुत्रों की हत्या कर दी। उन्होंने ब्रम्हास्त्र से उत्तरा के गर्भस्थ परिक्षित को भी मारना चाहा। इसप्रकार अश्वत्थामा ने अपने प्रतिशोध को पूरा किया वह उनका अट्टहास है--

"करता हूँ अट्टहास, सुन ले दिग्देश काल।
द्रुपदों को निगल गया, बनकर मै महाव्याल।"44

2) **स्वभाव से क्षात्रधर्मी**-- अश्वत्थामा जन्मसेही ब्राम्हण है, परतु स्वभाव और कर्म से क्षत्रिय है, पांडव पुत्रोंका प्रतिशोध लेकर जब अश्वत्थामा भाग रहा था उसी समय युधिष्ठिर उसे कहते है कि हे, अश्वत्थामा तुम्हे भय किस बात का है? ब्राम्हण होने के कारण तुम अवध्य हो। ब्राम्हण का वध नही किया जाता तुम तो देव गुरु बृहस्पति के पुत्र हो, शिवजी के अवतार हो। आज अपने अहंकार के खंडित होने के कारण ही तुम्हारी यह दशा हो रही है।"45

अश्वत्थामा शत्रुओ से बदला लेनेवाला प्रतिशोधी, क्रुर, और निष्ठूर है उसके हृदय मे उदारता , क्षमा, करुणा की भावना नही है। दुर्योधन द्वारा उसे सेनापति का पद दिया जाता है। उन्ही के सेनापतित्व मे युध्द का अंतिम निर्णय हुआ।

3) **पीडा का प्रतीक**--अश्वत्थामा के चरित्र का मूल उसकी पीडाभीरुता में है। काव्य में वे पीडा के प्रतीक है। वे एक सामर्थ्यवान महारथी होते हुए भी पीडा भीरु थे। यही उनका दोष था। यह पीडा ही उनकी प्रेरणा और नियती बनी। इस संबंध में कवि ने भूमिका मे लिखा है--"पीडा से बचबचकर चलने के कारण ही अन्ततः परपीडक बनें और फिर प्रतिक्रियावश अतिपीडा के चक्र में फँसे, क्या पीडा ही अंन्ततः उनके लिए पाप,ताप और शाप बन गई?46

अश्वत्थामा कहते है जो दुष्कर्म मैंने किया हैं उसके कारण उत्पन्न हृदय में दुख की ज्वाला लिए मुझे इस युध्द भूमि, नगर, गॉव, राज्य को त्यागकर बहुत दूर जाना हैं। यही प्रतिक्रिया उसकी आत्मपीडा का कारण बनती है, कविका इस संबंध में कथन हैं-"प्राणी पीडा के वशीभूत है। जीवन हैं, तो पीडा अवश्य है, पीडा से बचना अति पाडा को त्यौता देना है। अपनी नियति के वश में अश्वत्थामा पॉच सहस्त्र वर्ष अतिपीडा भोगेंगे या भोग रहें है, पुराणवेत्ता पंडितो का ऐसा विश्वास हैं।"47

उत्तरजय काव्य के प्रमुख पात्र श्रीकृष्ण का अश्वत्थामा के प्रति कथन है--

ने

"पीडा बनकर पीडा करती, तुम से क्रीडा
देखो तो दंड धरे आती हैं अति पीडा।"48

पर इतने से नियति का विधान समाप्त नहीं हो जाता जिस् व्यक्ति को हम पीडा देते हैं, वह भी प्रतिशोध की अग्नि में स्वाभाविक रुपसे जलना हैं। यदि वह व्यक्ति युधिष्ठिर जैसा धर्मशील हो और बदले की भावना से प्रेरित नहीं हो तो श्रीकृष्ण का का विधान इसके लिए विवश कर देता हैं-- युधिष्ठिर को संबोधित करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि युधिष्ठिर तुम अनजान नहीं हो, तुम तो जानते हों कि सच्चा धर्म वहीं हैं जो कर्म की साधना किए हुए हों। इसलिए मणि को धारण करनेवाले अश्वत्थामा की मणि छीनकर तुम अपने कर्म का पालन करों।'49 पाप का फल मनुष्य को अनविार्य रुप से मिलता हैं। इसीकारण अश्वत्थामा ने केवल आत्मपीडा को ही नहीं अपनाया, वरन् अपने माथे की मणि देकर और उसके स्थानपर प्रण लेकर शाश्वत परपीडा का भी वरण किया।

इसप्रकार पीडा ने ही पाप, तापतथा शाप का रुप धारण किया और मोहजित स्वरति की भावना को शमित कर अश्वत्थामा को बाहय एवं आंतरिक द्वंद्व से मुक्ति दिलाई।

4) संघर्ष प्रधान और आत्मग्लानि से भरा चरित्र--

अश्वत्थामा के चरित्र की सबसे बडी विशेषता यही हैं कि वह संघर्षप्रधन हैं। अश्वत्थामा द्रौपदी के पॉचो पुत्रोंका वध तो करता हैं पर उसका मन द्विधा से भर उठता हैं कि मेरा यह कृत्य उचित है अथवा अनुचित? कृतवर्मा उसे अनार्य कहते हैं तो अश्वत्थामा विक्षोभ से भर उठता हैं। वह अपने को अनार्य स्वीकारने के लिए तैयार नही हैं उनका कथन हैं--

"सेनापति नहीं रहा? नहीं मैं अनार्य नहीं।
कृतवर्मा! क्या अनार्य होते कृतकार्य कहीं?

"मैनें जो दिया वचन कुरुपति दुर्योधन को,
करता क्या पूर्ण न मैं, दृढ कर अपने मन को?"50

अश्वत्थामा के मन का यह संघर्ष अंत में उसके हृदय की आत्मग्लानि में बदल जाता हैं। अश्वत्थामा कहते हैं कि उत्तरा के गर्भस्थ शिशु के वध से जिस भ्रुण हत्या का पाप मैंने किया हैं, उससे मुझे मुक्ति नहीं मिल सकती।'5। अपने महापाप के लिए अश्वत्थामा पाँच सहस्त्र वर्षो की अतिपीडा ने शाप को स्वीकार करते हैं।

5) स्वामी भक्त-- अश्वत्थामा का चरित्र निष्ठुर स्वामीभक्त और वचनपालक हैं। उसने अपने स्वामी दुर्योधन को वचन दिया था कि वह पांडव कुल का विनाश करके रहेगा। अपनी इसी प्रतिज्ञा को वह पूरा करता हैं, और अपने स्वामी भक्ति के आदर्श को प्रकट करता हैं, कृपाचार्य से वह कहता हैं--

"नहीं रहें द्रुपदा के महारथी पाँच पूत।
मेरा ब्रम्हास्त्र करें पॉडवकुल को अऊत।"52

इसतरह अश्वत्थामा में स्वामीभक्ति दिखाई देती हैं।

निष्कर्ष रुपसे यह कहा जा सकता है कि कविने अपने काव्य में अश्वत्थामा का चरित्र मूलक संवेदना के अनुरुप चित्रित किया हैं। महाभारत में अश्वत्थामा को शिव आ अवतार बतलाया गया हैं। देवी भागवत और श्रीमद्भागवत में उन्हे भावी व्यास कहा गया है। यही नहीं उनकी गिनती भावी सप्तर्षियों में की जाती हैं। उत्तरतय में कवि ने अश्वत्थामा को पीडा का प्रतीक माना हैं। "पीडा की चरमानुभूति के बिना प्राणि मुक्ति प्राप्ति नही कर सकता" यही कवि की मान्यता है। अश्वत्थामा के चरित्रद्वारा कविने इसे प्रकट किया हैं।

---श्रीकृष्ण--

श्रीकृष्ण द्वापर युग के नायक थे। महाभारत काल में वे अलौकिक और असाधारण रुप लेकर अवतीर्ण हुए थें। उन्हें विष्णु का अवतार माना गया हैं। उनकी चरित्रागत विशेषताएँ इसप्रकार हैं--

1) नारायण के रुप में भी नर-- 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' दोनों कृतियों में श्रीकृष्ण नारायण रुप में है। द्रौपदी स्वयंवर के अवसर पर ही पाण्डवों का श्रीकृष्ण से मिलन होता हैं। श्रीकृष्ण को यज्ञपुरुष नारायण कहा जाता हैं। द्रौपदी यज्ञकुंड से पैदा हुई थी इसीलिए

श्रीकृष्ण और द्रौपदी का भाई बहन का अंतरंग संबंध हैं। जिससमय दुष्ट दु:शासन भरी सभा में द्रौपदी का चीरहरण कर रहा था, इस दारुण दशा को भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य जैसे महाबली और नीतिज्ञ अपनी ऑखों से देख रहे थे पर प्रतिकार न कर सके। उसीसमय इस अग्निकन्या द्रौपदी की पुकार यज्ञेश कृष्ण ने सुन ली और वह दु:शासन द्वारा बार बार वस्त्र खीचने पर भी निर्वसन न हो सकी उन्होंने कृष्णा की लाज रख ली।"53 कुंती श्रीकृष्ण के नारायण रुप को प्रकट करती हुई कहती है--

"कृष्ण! तुम्ही जय दाता त्राता हो तत्वोंके
नर के तुम नारायण संबल नि:सत्वों कें।"54

नारायण रुप में श्रीकृष्ण भक्त वत्सल हैं वे भक्तोंपर कृपा करनेवाले हैं। भक्तों के पाप पुण्य शिरोधार्य करनेवाले हैं। उत्तरजय में कविने उनका मानवीय रुप ही अधिक प्रकट किया हैं। इसलिए तो वे गांधारी और अश्वत्थामा के शाप को स्वीकारते हैं। मानवीय रुप में वे धर्मनीति का पालन करनेवाले श्रीकृष्ण का प्राणांत भी संसार के अन्य मानव प्राणियों जैसा होता हैं। एक बहेलिया द्वारा उनके प्राण हर लिये जाते हैं।

2) **कर्मयोग का संदेश देनेवाले--** श्रीकृष्ण के चरित्र का सबसे महत्वपूर्ण अंग यही हैं कि वे इस काव्य में कर्मयोग के साधन बनकर आए हैं। महाभारत युध्द के अवसर पर अर्जुनने अपने सामने स्वजनों को पाकर युध्द करने से इन्कार कर दिया था। तब श्रीकृष्ण ने उसके कर्तव्य का बोध कराया, कर्मयोग की साधना का संदेश देकर युध्द के लिए प्रेरित किया। महाभारत युध्द के पश्चात युधिष्ठिर की भी अर्जुन जैसी दशा होती है। महाभारत युध्द के संहार से उसका मन विक्षुब्ध हो जाता हैं, वे अपने कर्तव्य को भूल जाते है राजधर्म का पालन करने से इन्कार करते है। वे अश्वत्थामा को दंड नही देना चाहते तब श्रीकृष्ण युधिष्ठिर को उनका कर्तव्य पथ बतलाते है वे कहते है--

'भूतल का धर्म- कर्म, धर्म कर्मधार्य यहॉ।
जीता हैं वही हुआ जन जो कृतकार्य यहॉ।'55

श्रीकृष्ण सिर्फ युधिष्ठिर को ही नही अश्वत्थामा को भी वें ऐसा ही संदेश देते हैं। अश्वत्थामा पीडा भीरु हैं, श्रीकृष्ण उसे पीडा का विष पीने की प्रेरणा देते है, उनकी दृष्टि में पीडा को अपनाना यही महानता हैं, हमें पीडा से बचकर दुसरों को पीडा नही देनी चाहिए अपितु दुसरो की पीडा को अपनी पीडा बना लेनी चाहिए। अश्वत्थामा से श्रीकृष्ण इसीलिए कहते है--

"बच बच कर चलने की बात तुम्हे चिरंजीव।
पीडा का पान करो, नर शंकर तुम न क्लीव।"56

श्रीकृष्ण द्वारा युधिष्ठिर और अश्वत्थामा को दिया गया यह संदेह ही काव्य का मूल संदेश हैं। हमे जीवन- कर्मयोगी बन जीवन के दुखों से संघर्ष करना चाहिए, संकटों से भयभीत बन पलायन नही करना चाहिए। दूसरों की पीडा अपनी पीडा समझकर उसे दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए।

इसतरह श्रीकृष्ण का चरित्र बडा महान और गरिमामय बनकर सामने आया है। वह अन्य पात्रों के लिए भी प्रेरक शक्ति बनकर आया हैं। उनके कारण ही अश्वत्थामा युधिष्ठिर को मणि सौंपते है, श्रीकृष्ण से प्रेरित होकर ही युधिष्ठिर राज्य को स्वीकार करते है, श्रीकृष्ण के साथ ही वे भीष्म पितामह के पास जाकर राज काज की शिक्षा ग्रहण करते हैं। श्रीकृष्ण के ही कारण धृतराष्ट्र अपना राजपाट युधिष्ठिर को सौंपते हैं। इसप्रकार निष्कर्ष रुपसे यह कहा जा सकता हैं कि श्रीकृष्ण के चरित्र ने काव्य में बडी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं। काव्य के नायक न होते हुए भी उनका चरित्र गरिमामय बन गया हैं।

---विदूर---

विदूर धृतराष्ट्र और पांडु के ही भाई थें। धर्मराज युधिष्ठिर की भांति ये भी धर्म के अंश थे। विदुर बडे धर्मात्मा और नीतिज्ञ थें। इसीलिए धर्म करनेवाले पाडवों की उन्होंने सदैव प्रशंसा की तथा अनीति पर चलनेवाले कौरवो की निदा की। महाभारत के विदुर का भी वहीरुप हम उत्तरजय काव्य में पाते है। विदुर परम नीतिज्ञ हैं। उन्होने दूसरो को नीति धर्मपर चलने के लिए कहा है। इसीलिए तो श्रीकृष्ण कहते है--

विदुर-नीति युक्त रहें-राजा का हृदय मर्म।
सेवक का धर्म बने शासक का सदय कर्म।"57

विदुर नीतिज्ञ थें, राजा कैसा होना चाहिए इसके संबंध में उन्होंने कहा हैं--

"काकुदीक काम, क्रोध कीर कामवाहन का,
नयन मोह भोग लुब्द, दुरुपयोग साधन का।"58

विदुर ही युधिष्ठिर को पृथा माता के पास चलकर उनका आशीवाद ग्रहण करनेके लिए कहते है। उसके चरणों को स्वर्ग सेतु कहते हैं। युधिष्ठिर जब द्वारिका नगरी का नाश और श्रीकृष्ण के मृत्यू का समाचार सुनकर क्षुब्द हो उठते है तब हृदय मे स्थिर विदुरही उन्हे सांत्वना देते है। वे

परम कृष्ण भक्त हैं। उत्तरजय काव्य में भी विदुर को हम परम कृष्ण भक्त के रुप में पाते हैं, जब गांधारी श्रीकृष्ण को शाप देती हैं तो उन्हें बडा दुख देता होता हैं। देह त्यागते समय विदुर ने युधिष्ठिर को अपने पास बुलाया और अपने सम्मुख खडा किया। विदुर ने खडे खडे ही देह त्याग दिया था और उनकी आत्मा युधिष्ठिर के हृदय में समा गई थी। इस प्रकार विदुर के चरित्र की जो मुख्य विशेषताएँ है। काव्य के थोडे ही अंश में कविने बडे कुशलता से उनका वर्णन किया है।

---भीष्म पितामह---

भीष्म पितामह उत्तरजय में ऐसे पात्र हैं, जो स्वयं सामने नहीं आते परंतु अन्य पात्रों की प्रशस्ति के रुपमें उनका चरित्र हमारे सामने आता है। द्रौपदी तथा उत्तरजय दोनों काव्यों में किन्ही एक दो घटनाओं के सदर्भ में ही उनके चरित्र को स्पष्ट किया गया है। पितामह भीष्म कुरुकुल के अभिभावक हैं, वे सदा ही उनके हित में तत्पर रहते हैं। अंधे धृतराष्ट्र के लिए उन्होने कभी गांधारी का अपहरण किया था। यह पाप उन्हे खलता है। पाडवो की भाग्य लक्ष्मी द्रौपदी को देख उनका हृदय आल्हादित होता है, वे शकुनि से प्रार्थना करते है कि वह अपनी प्रतिशोध भावना को त्याग कुरुकुल के मंगल की बात सोचे। 59 वे कौरवो और पांडवो के समान रुप से अभिभावक है। वे पांडवोके सत्याग्रह और कौरवो के दुराग्रह से अच्छीतरह परिचित है। एक ही कुल के दो तटोपर स्नेह का सेतु बांधने के लिए वे कृतसंकल्प है।

भीष्म की प्रशंसा में श्रीकृष्ण कहते हैं कि वे आर्यो मे श्रेष्ठ आर्य है, अष्टम वसु के अवतार हैं, अपराजित है, शस्त्र शास्त्र का ज्ञान के मूर्त रुप है। वे वीतरागी और वसुधा के बधनो से मुक्त है धर्मराज युधिष्ठिर भीष्म पितामह से 'प्रजा हेतु कैसे हो, सचलित राज तंत्र' इसकी दीक्षा लेने के लिए तत्पर हो उठते हैं। भीष्म पितामह ही युधिष्ठिर की शंकाओं का समाधान करते है। उन्हें नीति और ज्ञान का संदेश देते है। इसतरह द्रौपदी और उत्तरजय दोनों काव्योमें पितामह भीष्म का चरित्र बडा महान तेजस्वी और उदात्त है।

---कुंती---

SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR LIBRARY

कुंती या पृथा पांडवों की माता है। द्रौपदी और उत्तरजय दोनों काव्यों में वह पृथ्वी माता की प्रतीक है। उसने सुर्य और इंद्र जैसे देवताओ के आवाहन द्वारा कर्ण और अर्जुन

जैसे वीरपुत्र पायें। युधिष्ठिर जैसा नररत्न पुत्र पाया जो पंचतत्वों का संश्लिष्ठ रुप हैं।'60 धर्मराज युधिष्ठिर पृथ्वी माता के रुप में उनकी वंदना करते हुए कहते हैं--

"समर यज्ञ पूर्ण हुआ, चूर्ण हुआ अहंकार"
पृथ्वी की सेवा ही माता का हृदय -द्वार।"6।

माँ कि ममता से भरा कुन्ती का नारी सुलभ हृदय हमें 'उत्तरजय' काव्य में देखने को मिलता है। वे अपने पुत्र धर्मराज युधिष्ठिर को आशीर्वाद प्रदान करने के लिए स्वयं उपस्थित होती हैं। जिसप्रकार विदुला ने अपने विजयी पुत्र संजय को छाती से लगाया था। परम सुख और सतोष का अनुभव किया था, उसीप्रकार कुंती भी अपने पुत्र युधिष्ठिर को छाती से लगाती और परमसुख का अनुभव करती है।

कृष्ण के प्रति भी कुंती परम श्रध्दालु हैं। उन्हे वह नारायण स्वरुप मानती हैं। उन्हें संसार के प्रति माया, ममता नही हैं पति के मृत्यु के पश्चात वह इसीलिए जीवित रही कि अपने पुत्रोका पालन पोषण कर सके - अपने मातृधर्म को पूरा कर सके। इसतरह द्रौपदी और उत्तरजय दोनो काव्योमें कुती के उज्वल चरित्र को कविने स्पष्ट किया है।

उपर्युक्त पात्रो के अतिरिक्त 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' में गौण पात्रो के रुप में भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोणाचार्य, कर्ण, आदि पात्र प्रमुख हैं, तो अभिमन्यु, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, संजय, कृपाचार्य, कृतवर्मा, परीक्षित आदि पात्र भी है। जिनका उल्लेख पात्रों के वार्तालाप के मध्य प्रसंगवश आया है।

भीम युधिष्ठिर के भाई है। वे पवन तत्व के प्रतीक हैं। जब दुःशासन भरी सभा में जीवनीशक्ति द्रौपदी को निर्वसन करने का प्रयास करता है तब वह दुःशासन की जंघा तोडकर लहु पीने की प्रतिज्ञा करता है और महाभारत के युध्द में उसे वह पूरी करता है। भीम पवन (वायुदेवता) से संबधित हैं तदनुरुप उनमें अतुल बल विक्रम है। हनुमान की तरह ही द्वंद्व तथा व्यक्तिगत शौर्य प्रदर्शन के अवसरो पर वृक्षोको उखाडकर शत्रुओंपर प्रहार कर विजयी होते हैं। पाँचो पांडवो में भीम सब की अपेक्षा सरल प्रकृति के है।

अर्जुन अग्नितत्व के प्रतीक हैं। वे महाभारत का महत्वपूर्ण पात्र है। उनका इंद्र से निकट का संबंध हैं। आग्नेय अर्जुन ने ही द्रौपदी स्वयंवर में अयोनिजा होमकुमारी द्रौपदीपर विजय पाई थी। महाभारत युध्द के अवसरपर कृष्णने अर्जुन को कर्मयोग की साधना का संदेश दिया था। अग्नि तत्व प्राकृत का संस्कार किया करता हैं। फलस्वरुप अर्जुन ने प्राकृत कर्णपर विजय पाई। इसके मूल में भी यही रहस्य था कि कर्ण अवैध और प्राकृत था तो अर्जुन

पांडु-कुंती की वैध संतान होने से संस्कृत था। प्राकृतपर संस्कृत की सदा विजय होती आयी है। अर्जुन ने स्वर्ग में जाकर ब्रम्हास्त्र की प्राप्ति भी की थी।

कर्ण-कुंती का अवैध पुत्र हैं, जो दुर्योधन के पक्ष में होने के कारण जीवनीशक्ति और पुरुष के मिलन में बाधा बननेका प्रयत्न करता हैं, पर दिव्य समर्थन प्राप्त होने के कारण पराजित होता है। द्रौपदी स्वयंवर के अवसर पर उसने मस्यवेध के लिए वह विशाल धनुष्य उठा लिया तो द्रौपदी ने घोषणा कि की वह अवैध रीति से उत्पन्न कर्ण का वरण नही करेगी। द्रौपदी द्वारा किया गया यह अपमान उसे आजीवन सलता रहा।। कर्ण परम तेजोमय सुर्यदेवता का पुत्र था। दुर्योधन ने उसे अंग देश का शासक बना दिया था परंतु दुर्योधन (अनिति) का दास बनने के कारण दु शासन द्वारा द्रौपदी के चीरहरण में योग दिया था वह धर्मपथ से विमुख हो चुका था कवि कहता है--

"था कर्ण तेज का तनय,
किन्तु वह बना अनय का चेरा,
अक्षय प्रकाश का अंश
किन्तु स्वामी बन गया अंधेरा।' 63

फलस्वरुप कर्णकी पराजय होती है, कर्ण भारतीय साहित्य में दान और वीरता के लिए प्रसिध्द हैं

संजय-सुतपुत्र थे, जो मुनियों के समान ज्ञानी और धर्मात्मा थे, व्यासजी की कृपा से इनको दिव्य दृष्टि प्राप्त थी जिसके कारण हस्तिनापुर में बैठे बैठे ही वे युध्द देखते थे और धृतराष्ट्र को उसका वर्णन सुनाते रहते थें। उत्तरजय के स्वीकृति अंश में वे भाग्यका समर्थन करते हुए कहते है--

"देवेच्छा सिर माथे चाहे वह हो अनिष्ठ।
किंन्तु दैववादी को केवल स्वीकार इष्ट।" 64

इसतरह संजय का चरित्र मुनियों जैसा ज्ञानी है।

उपर्युक्त प्रमुख गौण पात्रोंके अलावा 'द्रौपदी' और 'उत्तरजय' में युधिष्ठिर के अनुचर नकुल जल के, और सहदेव धरती के प्रतीक है। इन पौराणिक पात्रोंके अतिरिक्त गुरु द्रोणाचार्य, अभिमन्यु, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, द्वैपायन व्यास परीक्षित आदि पात्र भी है जिनके चरित्र के कुछ अंश प्रसंगवश कृतिमें आया हैं जो सिर्फ कथाप्रवाह को बढाने के लिए सहायक हुआ हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधारपर हम कह सकते है कि 'द्रौपदी और उत्तरजय

के चरित्रचित्रण में कविने अनुठे कौशल का परिचय दिया हैं। दोनों कृतियों का विषय एक ही होने के कारण पौराणिक पात्रों द्वारा युगीन समस्याओं तथा अध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करनेका सफल प्रयास कविने किया हैं।। दोनो कृतियों के पात्र सजीव और प्रभावशाली बन गए हैं, जो पाठकोंके मनपर अपना प्रभाव रखाते हैं।

'द्रौपदी' में कविने 'द्रौपदी' के चरित्रद्वारा अपने नूतन अध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया हैं। द्रौपदी प्राचीन काल से ही महान तेजस्वी नारी हैं। महाभारत कथा रुद्र की लक्ष्मी जिसने अपनी प्रबल शक्ति और प्रेरणा से पांडवो को विजय के कीर्तिमग्न पथपर अग्रसर कर दिया हैं। महाभारत काल की यह प्राचीन नारी क्या आज के हमारे जातीय,जीवन को प्रेरणा देनेकी जीवनशक्ति रखती हैं।क्या उसमें वह क्षमता हैं? कविने इस प्रतिकात्मक, अध्यात्मिक, प्रबंध काव्य में इसी मूल प्रश्न का समाधान प्रस्तुत किया हैं। उसीतरह द्रौपदी में कवि ने द्रौपदी के बाद युधिष्ठिर के चरित्रको महत्व दिया है। कवि ने पाँचों पांडवो पाँच महातत्वों के प्रतीक के रुप में अंकित किया हैं, उनमें आकाशतत्व युधिष्ठिर का स्थान शीर्षस्थ और सर्वोपरि हैं। युधिष्ठिर का यह चरित्र एक आदर्श मानव के संघर्ष और संघर्षोपरांत विजयी होनेवाले सौभाग्यशाली मानव का चरित्र है। उसके बाद भीम पवन तत्व, अर्जुन अग्नितत्व, नकुल जल और सहदेव धरती के प्रतीक है। ये पाँचो ही मानो पाँच महातत्व हैं। द्रौपदीरुपी जीवनीशक्ति इन्हे परस्पर संश्लिष्ठ कर चैतन्य की ज्वाला भरती हैं।

'उत्तरजय' में युधिष्ठिर जो महाभारत के धर्मनिपुण पात्र हैं, उन्हें कविने अपने काव्य में आकाशतत्व का प्रतीक माना हैं। ये आकाश की तरह निर्विकार और निर्मल है। कविने युधिष्ठिर के चरित्र को अत्यंत महान और आदर्श रुपमें हमारे सामने रखा है। उनका गौरवमय जीवन और भव्य चरित्र अनुकरणीय हैं। क्षमा, त्याग, करुणा की वे प्रतिमूर्ति है। महाभारत युध्द के विनाश के कारण उनका हृदय करुणा से भर उठता है।

युधिष्ठिर का चरित्र हमें यह सदेश देता हैं कि मनुष्य का हृदय क्षमा, त्याग, और करुणा से भरा होना चाहिए। जिसतरह कमल किचड़ में रहकर भी अपनी सुंदरता और निर्मलता को नही छोडता, उसी प्रकार मनुष्य ने भी संसार में रहकर अपने आदर्शों से च्युत नहीं होना चाहिए। मानव बनकर उसे देवताओ जैसे कार्य करना चाहिए। उसीतरह कविने अश्वत्थामा को पीडा का प्रतीक माना है । प्राणी पीडा के वशीभूत हैं, जीवन है तो पीडा अवश्य हैं, पीडा से बचना अति पीडा को न्यौता देना है। उसीतरह जिस व्यक्तिको हम पीडा देते है वह

हम पीडा देते हैं वह भी प्रतिशोध की अग्नि में स्वाभाविक रुप से जलता है। पीडा की चरमानुभूति के बीना प्राणी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता, अश्वत्थामा के चरित्रद्वारा कविने प्रकट किया हैं।

इसप्रकार पं. नरेद्र शर्मा ने प्रस्तुत दोनो कृतियों में पात्रों की प्रतिकात्मकता में प्रयुक्त कर उनके द्वारा नया अर्थ तथा अपनी आध्यात्मिक दृष्टि को स्पष्ट करनेका प्रयास किया हैं। इसमें कविको पर्याप्त सफलता मिल गयी हैं। अतः हम यह कह सकते हैं कि प्रस्तुत दोनों कृतियो के चरित्रचित्रण में कवि सफल रहा हैं।

----------*----------*----------*----------*------

संदर्भ सूची

1) पं. नरेंद्र शर्मा, 'द्रौपदी' भूमिका से उदधृत पृ. 7 सं. 1986.

2) पं. नरेंद्र शर्मा 'द्रौपदी भूमिका पृ.9

3) वही पृ. 27

4) डॉ. वल्लभदास तिवारी, हिंदी काव्य मे नारी - आमुख सं. 1974

5) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ. 31 सं. 1986

6) वही पृ.31

7) वही पृ.7.

8) वही पृ.15

9) वही पृ.15.

10) वही पृ.70

11) पं. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. सं. 1966.

12) वही पृ. 50.

13) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.28 सं.1986

14) प. नरेद्र शर्मा उत्तरजय पृ.11 सं. 1966.

15) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.51. सं. 1986

16) प. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. 47. सं. 1966.

17) वही पृ.17.

18) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.63/64 सं.1986.

19) पं. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. 19. सं. 1966.

20) वही पृ.17.

21) वही पृ. 44.

22) वही पृ. 49.

23) वही पृ. 49.

24) वही पृ.19

25) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.69. सं.1986

26) प. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ.29. सं.1966.

27) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ. 117. सं. 1986.

28) वही पृ.121.

29) वही पृ.44.

30) वही पृ.38.

31) वही पृ.125.

32) वही पृ. 41.

33) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.46. सं. 1986.

34) वही पृ. 40.

35) वही पृ.37.

36) पं. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ.36. सं. 1966.

37) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.41. सं. 1986

38) वही पृ.41.

39) प. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. सं. 1966.

40) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.50. सं. 1986

41) वही पृ.50.

42) वही पृ.39.

43) वही पृ.39.

44) प. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ.22 सं. 1966.

45) वही पृ. 23.

46) प. नरेंद्र शर्मा उत्त रजय भूमिका पृ. 3 सं.1966.

47) वही पृ.3

48) वही पृ.31.

49) वही पृ.28.

50) वही पृ.23.

51) वही पृ.24.

52) वही पृ.22.

53) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.51 सं. 1986.

54) पं. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. सं. 1966.

55) वही पृ.27.

56) वही पृ. 31.

57) वही पृ.40.

58) वही पृ.39.

59) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.125. सं.1986

60) वही पृ.28.

61) प. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ. सं. 1966.

62) वही पृ. 41.

63) पं. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी पृ.34. सं. 1986.

64) पं. नरेंद्र शर्मा उत्तरजय पृ.36.सं. 1966.

65) प. नरेंद्र शर्मा द्रौपदी भूमिका पृ.9. सं.1986.

----------*----------*----------*----------

----------*----------*----------*----------*--